parmeshwarkaniyam.org

परिशिष्ट 8e: दशमांश और पहिलौठे फल — आज इन्हें मान पाना क्यों असम्भव है

यह पृष्ठ उस श्रृंखला का हिस्सा है जो परमेश्वर की उन व्यवस्थाओं की पड़ताल करती है जिन्हें केवल तभी माना जा सकता था जब यरूशलेम में मंदिर खड़ा था।

- परिशिष्ट 8a: वे परमेश्वर की व्यवस्थाएँ जिन्हें मंदिर की आवश्यकता थी
- परिशिष्ट 8b: बलिदान — आज इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8c: बाइबिल के पर्व — आज इनमें से कोई भी क्यों नहीं रखा जा सकता
- परिशिष्ट 8d: शुद्धिकरण की व्यवस्थाएँ — मंदिर के बिना इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8e: दशमांश और पहिलौठे फल — आज इन्हें मानना क्यों असम्भव है (यह पृष्ठ)।
- परिशिष्ट 8f: परमप्रसाद सेवा — यीशु का अंतिम भोजन पास्का था
- परिशिष्ट 8g: नजीर और मन्नत की व्यवस्थाएँ — आज इन्हें मानना क्यों असम्भव है
- परिशिष्ट 8h: मंदिर से संबंधित आंशिक और प्रतीकात्मक आज्ञाकारिता
- परिशिष्ट 8i: क्रूस और मंदिर

दशमांश और पहिलौठी उपज इस्राएल की बढ़ोतरी के पवित्र भाग थे — भूमि से (व्यवस्थाविवरण 14:22) और मवेशियों के झुंड से (लैव्यव्यवस्था 27:32) — जिन्हें परमेश्वर ने आदेश दिया था कि उन्हें उसके पवित्रस्थान में, उसकी वेदी के सामने, और उसके लेवीय याजकों के हाथों में प्रस्तुत किया जाए। इन आज्ञाओं को कभी रद्द नहीं किया गया। यीशु ने इन्हें कभी निरस्त नहीं किया। लेकिन परमेश्वर ने स्वयं मंदिर, वेदी और याजक-वर्ग को हटा दिया, जिससे आज इन आज्ञाओं का पालन असम्भव हो गया। जैसे सारी मंदिर-निर्भर व्यवस्थाओं के साथ है, वैसे ही यहाँ भी प्रतीकात्मक "बदलाव" आज्ञाकारिता नहीं बल्कि मनुष्य द्वारा गढ़ी गयी बातें हैं।

व्यवस्था ने क्या आज्ञा दी थी

व्यवस्था ने दशमांश को बिल्कुल स्पष्ट रूप से परिभाषित किया। इस्राएल को अपनी सारी बढ़ोतरी — अन्न, दाखमधु, तेल और पशुओं — में से दसवाँ भाग अलग रखना था और उसे उसी स्थान पर ले जाना था जिसे परमेश्वर चुनता

(व्यवस्थाविवरण 14:22-23)। दशमांश स्थानीय रूप से बाँटा नहीं जाता था। इसे मनचाहे शिक्षकों को नहीं दिया जाता था। इसे धन में बदलने की इजाज़त केवल एक संकीर्ण परिस्थिति में थी, जब दूरी के कारण उसे ले जाना सम्भव न हो; और तब भी वह धन परमेश्वर के सामने पवित्रस्थान के भीतर ही खर्च होना था (व्यवस्थाविवरण 14:24-26)।

दशमांश लेवियों का भाग था, क्योंकि उन्हें भूमि का कोई निज हिस्सा नहीं मिला था (गिनती 18:21)। परन्तु स्वयं लेवियों को भी अपने द्वारा पाए गए दशमांश में से दशमांश लेकर वेदी पर याजकों को देना पड़ता था (गिनती 18:26-28)। पूरा प्रबन्ध चल रहे मंदिर पर निर्भर था।

पहिलौठी उपज की व्यवस्था तो और भी अधिक विस्तृत थी। उपासक अपनी फसल का पहला भाग सीधे याजक के पास लाता, उसे वेदी के सामने रखता और परमेश्वर द्वारा निर्धारित वचन के अनुसार एक घोषित किया हुआ कथन बोलता (व्यवस्थाविवरण 26:1-10)। यह कार्य पवित्रस्थान, याजक-वर्ग और वेदी — इन तीनों की माँग करता था।

इस्राएल ने कैसे आज्ञा मानी

इस्राएल ने इन व्यवस्थाओं का पालन केवल उसी तरीके से किया जिसमें सच्ची आज्ञाकारिता सम्भव थी: दशमांश और पहिलौठी उपज को शारीरिक रूप से उठाकर मंदिर तक ले जाकर (मलाकी 3:10)। किसी इस्राएली ने किसी “प्रतीकात्मक” या “आध्यात्मिक” रूप में इनका विकल्प नहीं गढ़ा। किसी भाग को स्थानीय धार्मिक अगुवों की ओर मोड़ नहीं दिया गया। कोई नया अर्थ नहीं जोड़ा गया। उपासना का अर्थ था आज्ञा मानना, और आज्ञा मानना ठीक वही करना था जो परमेश्वर ने कहा था।

तीसरे वर्ष का दशमांश भी लेवियों पर ही निर्भर करता था, क्योंकि परमेश्वर के सामने वही इस दशमांश को ग्रहण करने और बाँटने के उत्तरदायी थे — सामान्य व्यक्तियाँ नहीं (व्यवस्थाविवरण 14:27-29)। हर स्तर पर दशमांश और पहिलौठी उपज उसी प्रणाली के भीतर अस्तित्व में थे जिसे परमेश्वर ने स्थापित किया था: मंदिर, वेदी, लेवी, याजक, धार्मिक शुद्धता।

आज आज्ञा मानना क्यों असम्भव है

आज मंदिर नहीं है। वेदी नहीं है। लेवीय याजक-वर्ग सेवा नहीं कर रहा। पवित्रस्थान के बिना शुद्धता की प्रणाली काम नहीं कर सकती। इन परमेश्वर-दी हुई संरचनाओं के बिना कोई भी दशमांश या पहिलौठी उपज की व्यवस्था नहीं निभा सकता।

परमेश्वर ने स्वयं पहले से कह दिया था कि इस्राएल “लम्बे समय तक राजा या प्रधान, बलिदान या खम्भे, एफ़ोद या घर के देवताओं के बिना” रहेगा (होशे 3:4)। जब उसने मंदिर को हटाया, तब उसने उन सभी व्यवस्थाओं को मानने की सामर्थ्य भी हटा दी जो उस पर निर्भर थीं।

इसलिए:

- कोई भी मसीही पास्टर, मिशनरी, मसीही रब्बी या कोई भी अन्य सेवकाई-कार्यकर्ता बाइबिलीय दशमांश प्राप्त नहीं कर सकता।
- कोई मण्डली पहिलौठी उपज एकत्र नहीं कर सकती।
- कोई भी प्रतीकात्मक दान इन व्यवस्थाओं को पूरा नहीं करता।

व्यवस्था ही आज्ञाकारिता को परिभाषित करती है, और उसके अलावा कुछ भी आज्ञाकारिता नहीं है।

उदारता उत्साहित की जाती है — पर वह दशमांश नहीं है

मंदिर के हट जाने से परमेश्वर का दया करने का बुलावा नहीं हट गया। पिता और यीशु दोनों विशेष रूप से गरीबों, सताए हुए लोगों और ज़रूरतमन्दों के प्रति उदारता के लिए प्रोत्साहित करते हैं (व्यवस्थाविवरण 15:7-11; मत्ती 6:1-4; लूका 12:33)। स्वेच्छा से देना अच्छा है। किसी कलीसिया या किसी भी सेवकाई की आर्थिक सहायता करना मना नहीं है। धर्मी कार्यों का समर्थन करना सराहनीय है।

परन्तु उदारता, दशमांश नहीं है।

दशमांश में आवश्यक था:

- एक निश्चित प्रतिशत
- निश्चित वस्तुएँ (कृषि से प्राप्त बढ़ोतरी और पशु)
- एक निश्चित स्थान (पवित्रस्थान या मंदिर)
- एक निश्चित प्राप्तकर्ता (लेवी और याजक)
- धार्मिक शुद्धता की दशा

आज इन में से एक भी बात अस्तित्व में नहीं है।

दूसरी ओर उदारता:

- उसके लिए परमेश्वर ने कोई प्रतिशत निर्धारित नहीं किया है
- उसका मंदिर की व्यवस्थाओं से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है
- वह विधि के रूप में आज्ञा नहीं, बल्कि स्वेच्छिक है
- वह दया की अभिव्यक्ति है, दशमांश या पहिलौठी उपज का स्थानापन्न नहीं

आज यह सिखाना कि किसी विश्वासी को “ज़रूर दस प्रतिशत देना चाहिए”, शास्त्र में जोड़ना है। परमेश्वर की व्यवस्था किसी भी अगुवे — न पुराने समय के, न आज के — को यह अधिकार नहीं देती कि वह दशमांश की जगह कोई नया अनिवार्य दान-प्रणाली गढ़े। यीशु ने कभी ऐसा नहीं सिखाया। भविष्यद्वक्ताओं ने कभी ऐसा नहीं सिखाया। प्रेरितों ने कभी ऐसा नहीं सिखाया।

गढ़ा हुआ “दशमांश” आज्ञाकारिता नहीं, बल्कि अवज्ञा है

कुछ लोग आज वित्तीय दान को “आधुनिक दशमांश” में बदलने की कोशिश करते हैं, यह दावा करते हुए कि जब भी मंदिर की व्यवस्था न रहे, उद्देश्य वही बना रहता है। पर यह वही प्रतीकात्मक आज्ञाकारिता है जिसे परमेश्वर अस्वीकार करता है। व्यवस्था दशमांश को न तो पुनर्परिभाषित करने की, न स्थान बदलने की, और न किसी अन्य व्यक्ति को सौंप देने की अनुमति देती है। एक पास्टर लेवी नहीं है। कोई कलीसिया या मसीही मण्डली मंदिर नहीं है। दान पहिलौठी उपज नहीं है। चन्दे की पेटी में रखी गयी धनराशि आज्ञाकारिता नहीं बन जाती।

जैसे बलिदानों, पर्वों की भेंटों और शुद्धिकरण की विधियों के साथ है, वैसे ही यहाँ भी हम व्यवस्था ने जो आज्ञा दी है उसका सम्मान इस प्रकार करते हैं कि हम उसे मनुष्यों की गढ़ी हुई बातों से बदलने से इनकार करते हैं।

जो मान सकते हैं उसे मानते हैं, और जो नहीं मान सकते उसे आदर देते हैं

दशमांश और पहिलौठी उपज सदा रहने वाली आज्ञाएँ हैं, पर उनका पालन तब तक असम्भव है जब तक स्वयं परमेश्वर मंदिर, वेदी, याजक-वर्ग और शुद्धता की पूरी व्यवस्था को पुनःस्थापित न करे। उस दिन तक हम प्रभु के भय में चलते हुए जब भी सक्षम हों उदारता से देते हैं — न तो दशमांश के रूप में, न पहिलौठी उपज के रूप में, न किसी प्रतिशत की आज्ञाकारिता के रूप में, बल्कि दया और धार्मिकता की अभिव्यक्तियों के रूप में।

कोई स्थानापन्न गढ़ना व्यवस्था को दोबारा लिखना है। कोई स्थानापन्न गढ़ने से इनकार करना उस परमेश्वर का आदर करना है जिसने यह व्यवस्था दी।